मुखपृष्ठ
साहित्यकारों की वेबपत्रिका
साहित्यसुधा
वर्ष: 4, अंक 90,अगस्त(प्रथम), 2020

अनूठा बंधन

भारती शर्मा

साहित्य में काल्पनिकता सहजतम रूप में सिद्ध होती है क्योंकि यथार्थ के साथ सामंजस्य करके उसे प्रस्तुत किया जाता है। साहित्यिक जगत और वास्तविक जगत पृथक होते हुए भी वस्तुतः एक दूसरे से जुड़े ही होते हैं। जीवन के यथार्थ का सामना साहित्यिक कल्पनाशीलता या भावुकता से नहीं किया जा सकता। समाज में अनेक बंधन निहित होते हैं और जब हम समाज का हिस्सा बनकर जीते हैं तो रिश्तों नातों के बंधनों व दायित्व को स्वीकारना पड़ता है।

वैशाली इस साहित्यिक दुनिया को यथार्थ के पुल से भले ही जोड़ती आई है किंतु वह स्वयं किसी बंधन को नहीं स्वीकारती। वह रिश्तों के हर आयाम को अपने लेखन में प्रस्तुत कर चुकी है किंतु खुद किसी डोर को बनने नहीं देती। पात्रों का सृजन करते -करते, उनमें संवेदनाएँ उड़ेलते-2 उसकी स्वयं की संवेदनाएं कहीं खो चुकी हैं।

उसकी जिंदगी साहित्यिक जगत में ही उलझ गई है। उसे स्वरचित पात्रों के साथ रहना, उनके साथ जीना, उनके लिए सोचना और उसे कागज पर उतारना अपेक्षाकृत रूप से अधिक पसंद है। वे उसकी निजता को बाधित जो नहीं करते.. ना मुखौटे भरी जिंदगी जीते हैं.. और ना ही उसके अस्तित्व पर प्रश्न उठाते हैं। उनकी सृजनकर्ता भी है, और ईश्वर भी वहीं है। किसी को गढ़ना, उसकी नियति निर्धारित करना और जिंदगी की डोर अपने हाथ में रख कर, अपनी सोच के मुताबिक चलाना... इसका आनंद वही समझ सकता है, जिसने इसे जिया हो। लेखक होने का अपना अद्वितीय अनुभव है... और उसे वैशाली जी भर कर जी रही है।

सफलता का पर्याय माने जाने वाले हर पहलू का वह हिस्सा है। अपने बूते वह सदैव जीत हासिल करती आई है। और हमेशा जीतते रहने वालों को हार का स्वाद पता ही नहीं होता। कई बार तो उसे भी जीत मानकर भुलावे में रह रहे होते हैं। वैशाली भी आत्मविस्मृत हो मरीचिका में भटक रही है। जीवन में बहुत कुछ ऐसा होता है जो प्रत्यक्षतः नजर नहीं आता या.. नजर आने पर भी उसका महत्व समझ नहीं आता। कैसी विडंबना है कि वक्त के गुजरने के बाद उसके पदचन्हों को ढूंढते भागते हैं.. जबकि ये भी ज्ञात होता है कि यह असंभव है।

वह कभी-कभी सोचती है कि अतीत के पन्नों को पलट कर वहां से उन लम्हों को वापस ला पाती... लम्हे... जो सर्वाधिक अमूल्य और खुशनुमा थे।.. उसने जिन्हें बिना किसी शर्त के अतुल के साथ जीया था। तितली सी उड़ हर खूबसूरत बगीचे को उड़ानों से जाना था.. आसमान की ऊंचाइयों को... सागर की अथाह गहराइयों को नापा था। खुशी के हर कतरे को अपने दामन में संजोने के सपने पाले थे... किंतु जैसे ही हाथ बढ़ाती है दिमाग तुरंत

दिल के दरवाजे बंद कर देता है। "विवेकहीन मत बन वैशाली!!... यह वक्त तेरी कमजोरी है.. आगे बढ़.. आंखें खोल.. वर्तमान पर ध्यान केंद्रित कर...।" और वह मजबूती से अपने दिमाग के तर्कों को समर्थन करके अतीत की किताब को बंद कर देती।

वह अपने फैसलों को लेकर आश्वस्त रही है कि वह सदैव उसके लिए सही व अटल होते हैं। अकुल के साथ अपने सालों के रिश्ते का अंत भी उसने सोच विचार कर लिया था, जिसपर आखिर में अकुल ने भी मुहर लगा दी थी। वह उसके जीवन से खामोशी के साथ चला गया था और फिर कभी मुड़कर नहीं देखा। वैशाली के स्वच्छंद जीवन में अकुल का प्रवेश भी खामोशी के साथ हुआ था। दोनों कॉलेज में साथ पढ़ते थे। कहते हैं, "विपरीत आकर्षित करते हैं. "...और यह बात उन दोनों पर प्रतिपादित हो सकती थी। एक बहती धारा-सी.. और दूसरा गहराई व ठहराव लिए दरिया का अंश।

अकुल में कुछ तो ऐसा था जिसने वैशाली को अपनी ओर खींचा था और जल्दी ही बांधने लगा। उसकी सादगी.. निश्छलता.. गहराई लिए भावपूर्ण आंखें.. और हद दर्जे का शांत स्वभाव। यह सब ऐसा था जिसने वैशाली के जीवन में एक प्रकार की स्थिरता उत्पन्न की थी। कोई तो शख्स जीवन में आता है, जिससे दिल के साथ दिमाग भी हार जाता है। वह उससे तर्क करने का मन भी नहीं बना पाती थी। वो उसकी हर उलझन का समाधान लिए रहता था..तो हर परेशानी में ढाल बन जाता था।

वैशाली के घर वालों के लिए वह एक खुशनुमा उम्मीद की तरह था जो उसे सामाजिक बंधनों की ओर ला सकता था। और उन्होंने अतुल को तैयार भी कर लिया था.. किंतु किसी की उम्मीद दूसरे के लिए ग्रहण बन सकती है।

अकुल के विवाह के प्रस्ताव ने वैशाली के डर को जगा दिया। विवाह नामक बंधन से उसे विरक्ति थी। उसने अपनी मां को तिल तिल घुटकर मरते देखा है। उनके लिए वह ऐसा बंधन था, जिसे तोड़ने की इजाजत सभ्य समाज नहीं देता। वे उसे ताउम्र ढोती रही और दंश सबको झेलना पड़ा। ऐसे कई उदाहरण उसने अपने इर्द-गिर्द पाए थे.. इसलिए वैवाहिक बंधन से उसका विश्वास पूर्णतया उठा हुआ था। साथ ही पारंपरिकता, रीति-रिवाजों व मान्यताओं से विद्रोह का जुनून भी अपने पंख फैला कर खड़ा हो गया।

वह खुद इस सब का हिस्सा बनने का स्वप्न में भी नहीं सोच सकती। अकुल को साफ इंकार कर दिया किंतु वह जानती थी कि उससे ज्यादा नहीं भाग सकेगी। पत्थर तक को पिघला देने की शख्सियत रखता था वह।.. अतः वैशाली ने जिंदगी के रास्ते अलग करने का फैसला ले लिया।

कई सालों तक उसे अपने फैसले पर संतुष्टि थी.. किंतु शायद अब नहीं। एक समय विशेष पर लिए गए फैसले आगामी जीवन के लिए भी उचित लगें.. यह कहां आवश्यक है !!

अब उसका मन अतीत की परतों में झांकने लगा है। जिन बंधनों की उसने कभी परवाह नहीं की.. वे अब सुखदता का एहसास कराने लगे हैं। मन के किसी कोने में छुपा हुआ खालीपन बांहें पसारने लगा है। वह भैया के परिवार के साथ समय बिताकर उसे नजरअंदाज करने का प्रयास करने लगी है। भैया को पुनः उम्मीद की किरण दिखाई देने लगी। उम्मीद.. इस शब्द ने वैशाली के जीवन में भी दस्तक देनी शुरू की है। सात वर्ष इतने भी ज्यादा नहीं होते.. क्या पता वह उसका इंतजार करता हो! वह कभी कभार सोचती तो उसका दिमाग झटक देता। ऐसा संभव नहीं ! मैंने उसे खुद अपने कारणों से दूर किया था...उसकी मर्जी जाने बिना एकतरफा फैसला लिया था।

अब वह क्यों इंतजार करेगा !! उसकी अपनी दुनिया होगी.. जहां हर रंग होगा.. खुशियों की महक होगी। उसकी मां तो बहुत जल्दी शादी कराना चाहती थीं। उस पर कितना दबाव था। यदि वह चाहता तो उसे ढूंढना कौन सा मुश्किल काम है!!

जिस विचार को हमारा दिमाग अस्वीकार करना रोकना चाहता है; दिल उसे बार-बार हमारे दिमाग में ले आता है। दिल और दिमाग की लुपा - छुपी में हमारा दिल यहां बाजी मार जाता है। वह जानती थी कि अतुल को आर्मी फील्ड बहुत पसंद था। कितनी बार दोनों ने इस पर बहस भी की थी। उसने हर सम्भावना को लेकर अकुल को खोजना प्रारंभ कर दिया। ... पर नियति की भी अपनी योजनाएं होती हैं।

इस उद्वेगपूर्ण मानसिक अवस्था में वह भैया के पास कोलकाता आ गई। वहीं भैया ने उसकी मुलाकात मेजर अरविंद दास से करवाई। मेजर में उसका कुछ तो अक्स था.. जिसने वैशाली को प्रभावित किया। वे बेहद सुलझे हुए व समझदार व्यक्ति थे। भैया ने इस बार जी जान लगा दिया... वैशाली की शादी के लिए सहमति पाने में। अब यह अपनों की अपेक्षाओं का भार था या फिर उसके अंतरतम का खालीपन... पहली बार ना अपने दिल की सुनी, और ना दिमाग की सुनी... बस अपनों की सुनी और सहमति प्रदान कर दी। साथ ही अपने अतीत और वर्तमान के मानसिक उद्वेग से भी मेजर दास को अवगत करा दिया। उन्होंने बखूबी समझा भी और उसे उस स्थिति से निकालने की कोशिशें भी कीं। भैया ने अविलंब शादी का मुहूर्त भी निकलवा दिया। वैशाली अब अपने नवजीवन की तैयारियों में व्यस्त रहने लगी। मेजर अरविंद बड़े ही मनोयोग से नए घर की साज-सज्जा और खरीददारी में लगे थे किंतु वैशाली को इस सब में कोई रुचि नहीं थी। सिर्फ एक इंसान के जिंदगी में होने या ना होने से जिंदगी के मायने किस तरह बदल जाते हैं....!!

फिर अचानक सैन्य दिवस पर वह मेजर अरविंद के दोस्त मेजर सूरी से मिली। वक्त पलों से जैसे पहरों में.... और पहरों से वर्षों में बदल गया..। विचारों की प्राचीर अतीत से वर्तमान तक आ खड़ी हुई...और फिर पल भर में धराशाई भी हो गई। जब उसके कानों तक संबोधन पहुंचा,
"अरे वैशु...! वैशाली !..तुम यहां..??

वह शिष्टाचार और औपचारिकताओं के समस्त नियम भूलकर जडवत खड़ी रही। वह उसे देखती रही कि इतना सहज तुम कैसे हो सकते हो अकुल??

वह अपनी नजरों से जैसे उस प्रश्न को पढ़कर अपनी चिर परिचित मुस्कान बिखेरने लगा। वैशाली ने किसी प्रकार खुद को संभाला। कुछ औपचारिक वार्तालाप के बाद पुनः मिलने के सहज वक्तव्य से वह लौट गये... किंतु वैशाली के जीवन में अलग ही प्रकार का झंझावत प्रवेश पा चुका था...जिससे वह किसी के साथ बाँट भी नहीं पा रही थी।

उसने सर्वप्रथम अरविंद को अवगत कराया कि उनका मित्र ही उसका अकुल है। अरविंद उसे भली-भांति समझने लगे थे और शायद उसके मानसिक उद्वेग को भी.. अतः उन्होंने उसे अकुल से फिर मिलने की सलाह दी। किसी प्रकार स्वयं के जज्बातों को समेटकर वह अकुल से मुलाकात करने पहुंची। वह हमेशा की तरह वैसा ही सहज और स्थिर था... किंतु वैशाली को यत्न करने पड़ रहे थे। वह चाय की प्याली में चम्मच घुमाते- घुमाते अतीत में जा भटकी..। अकुल ने टोक दिया,

"तुम्हारी यह बैठे -बैठे खो जाने वाली आदत गई नहीं??"

"हम्म्म.. आदतें ना आसानी से बनती है.. और ना छूटती हैं। " वर्तमान में लौटते हुए उसने गहरी सांस छोड़ी। कैफे का शांतिपूर्ण माहौल व मध्यम संगीत उसे अच्छा लग रहा था। थोड़ी देर में वह सामान्य हो गई।वह आज भी एक ही चम्मच चीनी लेता है चाय में। वह हँस दी,

"तुम पर भी कोई खास असर नहीं छोड़ा समय ने।"

"हां शायद.. पर बदली तो तुम भी कुछ खास नहीं। " एक फीकी सी मुस्कान के साथ उसने जवाब दिया।

कुछ क्षण के विराम के बाद वैशाली ने पूछ ही लिया, "अभी तक किसी के साथ बंधन में क्यों नहीं बंधे?? " सवाल सीधा था तो जवाब भी वैसा ही आया..

"बार - बार यह दिल बंधन नहीं स्वीकारता। मां के जाने के बाद यह अध्याय भी बंद हो गया और अब तो आर्मी ही सब कुछ है। देश के लिए जीने में अद्भुत मजा है...।"

"तुम्हे बुरा नहीं लगा मुझे अरविंद के .....? "

"बुरा क्यों लगेगा..? इस बंधन में तुम्हारा विश्वास तो लौटा.. मैं इसी से खुश हूं। पात्र भी सर्वश्रेष्ठ चुना है तुमने। भविष्य के लिए शुभकामनाएं वैशाली। "

उसने वैशाली को उसकी बात भी पूरी करने का मौका नहीं दिया।

"यह वक्त मुझे अतीत में ले जा पटकता है अकुल..। मैं किस प्रकार भविष्य का निर्माण करूंगी..!!" उसकी आंखों में देखते हुए बोली। शायद उसे वहां कुछ तलाश थी किंतु अकुल ने उसका प्रयत्न विफल कर दिया.. "अतीत की नींव पर भविष्य की ईमारत मत खड़ी करो। वर्तमान से भविष्य को जोड़ो और खुशी को जीवन में भरने दो। " अपनी चाय की अंतिम सिप लेकर वह बोला। "अभी मुझे हेड क्वार्टर निकलना है.. तो चलता हूं.. और हां.. शादी में जरूर बुलाना। उस पल को गंवाना नहीं चाहता मैं..। " उसी फीकी हंसी को बिखेर कर वह चला गया।

वैशाली कई दिनों तक उससे मिलने की हिम्मत ना जुटा सकी। अरविन्द को कुछ दिनों के लिए नक्सली इलाके में शांति प्रयास कार्य से जाना था.. किंतु अकुल उनके स्थान पर वहां चला गया। रोकने के तमाम प्रयासों को उसने खारिज कर दिया। जाते-जाते अरविंद से बोला..,

"तुम शादी की तैयारियां जारी रखो, भाई। लौटकर जश्न मनाएंगे। जानता हूं तुम उसे खुश रखोगे.. पर याद रखना, उसे हार बर्दाश्त नहीं। "

वैशाली के मन में सतत अंतर्द्वंद जारी था। आखिर उसने उसका पटाक्षेप करने का निर्णय कर ही लिया। और अरविंद को उससे अवगत करा दिया।

"मुझे माफ कीजिएगा.. पर मेरा मन अपने अतीत से आजाद नहीं हो पा रहा। उस बंधन से कभी खुद को भिन्न कर ही ना सकी थी। बस खुद को छल रही थी मैं। मुझे इस रिश्ते से मुक्त कर दीजिएआप.. मैं यह निभा नहीं सकूंगी।"

और प्रत्युत्तर में बस एक वाक्य मिला जैसे वह जानते ही हों...

"तुम हमेशा मुक्त ही थी वैशाली मैंने तुम्हें बांधा कब था??"

"तो यह तय रहा.. मैं उसका इंतजार कर रही हूं.. और इस बार उसे ऐसे बंधन में बांधूगी.. कि कहीं ना जा पाएगा।" वह एक छोटी बच्ची की तरह पुलकित होकर बोल उठी। उसके जीवन की समस्त शून्यता जैसे छंटने लगी। उसके अंदर नव स्फूर्ति का संचार होने लगा। लगा उसका जीवन पूर्णता कीं और बढ़ रहा है..। उसके स्वप्नों ने फिर से अंगड़ाई ली.. किंतु उनके परवान चढ़ने से पूर्व ही नियति ने सारी योजनाओं को ध्वस्त कर दिया। "नक्सली हमले में कई साथियों समेत मेजर अकुल सूरी हुए शहीद" टीवी पर यह समाचार सुनते - सुनते वैशाली दीवार के सहारे सरकती जमीन पर धराशाई होकर गिर पड़ी। उसके नेत्रों में पीड़ा व संताप का भयानक लावा उमड पड़ा।

जिस जीवन को अतीत के सुनहरे लम्हों में पिरो कर संवारने चली थी... वह ताश के महल की तरह ढहने लगा। उसने सोचा था कि उसके आते ही विवाह बंधन में बंध जाएंगे.. किंतु वह तो तिरंगे में लिपटा लौटा था.. और वैशाली उसके निकट बैठी पार्थिव दृष्टि से उसे निहार रही थी। कुछ दिन पूर्व बड़े मनोयोग से लायी लाल साड़ी को पहने वैशाली सभी के कौतूहल का केंद्र थी। किन्तु उसे किसी से कोई वास्ता ना था..। जिससे था, झुककर उसके कान में बुदबुदाई,

"तुम चाहे रहो या ना रहो.. यह बंधन ताउम्र रहेगा। अब इसे छूटने ना दूंगी। हम दोनों निभा लेंगे इसे..। मैं दृश्य होकर और तुम अदृश्य होकर.. पर अब ये बंधन ना छूटेगा अकुल..। "

और उसने अतुल के पार्थिव शरीर पर अपना सिर टिका कर आंखें बंद कर लीं।

कृपया रचनाकार को मेल भेज कर अपने विचारों से अवगत करायें